प्रवचन-१९१, श्लोक-२७७, गुरुवार, अषाढ़ शुक्ल १२, दिनांक २४-०७-१९८०

'नियमसार'। अमृतचन्द्राचार्य का प्रवचनसार का यह श्लोक है।

जानन्नप्येष विश्वं युगपदपि भवद्भावि-भूतं समस्तं,
मोहाभावाद्यदात्मा परिणमति परं नैव निर्लूनकर्मा।
तेनास्ते मुक्त एव प्रसभविकसितज्ञप्तिविस्तारपीत-
ज्ञेयाकारां त्रिलोकीं पृथगपृथगथ द्योतयन् ज्ञानमूर्तिः।।

क्या कहना चाहते हैं ? - कि इस आत्मा का जिसे कल्याण करना हो और आत्मा की शक्ति कितनी कैसी है, और विकास होवे तो कितना होता है ? उसे किसी की अपेक्षा नहीं है। आहाहा! आत्मा है, आत्मा। यह कहते हैं, देखो!

श्लोकार्थ : जिसने कर्मों को छेद डाला है... इतनी शक्ति उसमें है कि कर्मों को एक क्षण में छेद डाला है। उस आत्मा की इसे ज्ञान और श्रद्धा पहले करना चाहिए। इसके बिना रास्ता निकले, ऐसा नहीं है। दूसरे चाहे जितने रास्ते बतावे। अभी तो सभी साहित्य एक करना चाहते हैं। आहाहा! एक सिद्धान्त यह है कि आत्मा अपने स्वभाव में परिपूर्ण है। वह जब स्वभाव का आश्रय लेता है, तो पूर्ण आश्रय लेता है तो पूर्ण कर्म का नाश होता है। अब इमसें दो मत कहाँ है ? आहाहा! जिसे आत्मा का करना है... आहाहा! वह आत्मा...

जिसने कर्मों को छेद डाला है... ऐसी उसमें शक्ति है। आहाहा! कर्म को करना और बाँधना, यह उसका स्वभाव नहीं है। आहाहा! जिसे कल्याण करना है, वह चीज़ कैसी है ? और उसमें ताकत कितनी है ?- यह निर्णय किये बिना उसके सन्मुख नहीं हो सकता और सन्मुख हुए बिना कर्म का नाश नहीं होता। मार्ग तो यह एक है। आहाहा! अभी बड़ा (लेख) आया है। सब एक-इकट्ठे होओ, सब। बड़ा लपसिंदर आया है। यहाँ आया है। तुम कुछ लिखो। 'कनकविजय' श्वेताम्बर का कोई साधु है। सब हजारों नाम दिये हैं। यह अमुक जगह साधु, अभी स्थानकवासी, मन्दिरमार्गी, दिगम्बर, अन्यमति जैनमति सब। सबका ऐसा है कि तुम करते हो, वह ठीक करते हो। आहाहा! यहाँ लिखा है, तुम मेरे लिये कुछ लिखो। क्या लिखें ? यहाँ किसी को लिखते नहीं, और लिखना, वह क्रिया भी जड़ की है। यहाँ तो आत्मा का करना है। भाषा भले जड़ का नाश करने की

कही। परन्तु जड़ का नाश किया नहीं। अपनी परिणति अल्पज्ञ थी, उसका सर्वज्ञस्वभाव के आश्रय से नाश किया है। समझ में आया? आहाहा! ऐसा कब जँचे? और मनुष्यपने बिना ऐसी पूर्ण शक्ति कभी किसी गति में उत्पन्न नहीं होती। आहाहा!

पहले यहाँ प्रतीति में लेना कि मेरा आत्मा सर्व कर्म का नाश करनेवाला है और कर्म को छेद डाले, तब **ऐसा यह आत्मा भूत, वर्तमान और भावी...** यह तो तीनों काल को जाननेवाला है। आहाहा! अब ऐसी धर्म की बात, भाई! इसमें इकट्ठा करो, सब इकट्ठा करो। बड़ी पुस्तक है। कितने हजारों नाम सबके (दिये हैं)। हमें ऐसा कहते हैं कि करने में ये सब सहमत हैं। मेरे ऊपर लिखो। आप सहमत करो। कुछ लिखो। क्या लिखें? भाई! आहाहा!

जहाँ-जहाँ आत्मा है, वहाँ-वहाँ अपनी परिपूर्ण शक्ति से भरपूर है। आहाहा! उसकी प्रतीति बिना स्वभावसन्मुख पुरुषार्थ नहीं होता और कर्म का नाश नहीं होता। आहाहा! सर्व जगत को कल्याण करना हो तो उसकी आत्मा चीज़ कितनी, कैसी है? और उसमें गुण कितने हैं? और उसके गुण के आश्रय से अशुद्धता का नाश हो, तब तीन काल को जानता है। आहाहा! यह पहले में पहला विचार, प्रतीति और मनन में यह लेना चाहिए। लो, आया पहला। आहाहा! क्या कोई दूसरा रास्ता है?

जो वस्तु है, जैसा स्वभाव अन्दर है और भगवान ने जैसा अन्दर देखा है यह इस आत्मा में अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त बल... आहाहा! भरे पड़े हैं। वह पर के सम्बन्ध से अज्ञानपने के कारण विकारादि करता है। अपना स्वभाव विकार करना, ऐसा है नहीं। यदि विकार करने का स्वभाव होवे तो विकार का नाश करके कभी परमात्मा नहीं हो सकता। आहाहा! पहले में पहला.. आहाहा! **जिसने कर्मों को छेद डाला है...** ऐसे सर्वज्ञ लिये। प्रतीति में पहले सर्वज्ञ लिये। आहाहा! आत्मा ऐसा है। एक समय में तीन काल-तीन लोक को जाननेवाला आत्मा है। कर्म का नाश करके यह करता है और यह बनता है। आहाहा! बाकी सब बातें हैं। लाख बात करे। छहढाला में आता है न? 'लाख बात की बात निश्चय उर आणो छोड़ी जगत द्वंद्व-फंद निज आतम ध्याओ।' वस्तु तो यह है।

अब जिसे सर्वज्ञ ने देखा जो आत्मा और उसकी शक्ति और सामर्थ्य देखी,

तद्नुसार जिसकी प्रतीति में नहीं आता, तो वह उस रास्ते नहीं जाता। वह प्रतीति में नहीं आता तो अन्तर में नहीं जाता। अन्तर में गये बिना राग का नाश और अज्ञान का नाश नहीं होता। आहाहा! मार्ग तो सीधा है। आहाहा! आत्मा है या नहीं? है तो कितना है? प्रदेश से भले असंख्य प्रदेश है। परन्तु भाव से? भाव से अनन्त भाव (स्वरूप है)। संख्या से अनन्त गुण और एक-एक गुण में अनन्त शक्ति और अनन्त सामर्थ्य है। ऐसा पहले स्वीकार किये बिना, कर्म का नाश करनेवाला था और सर्वज्ञ है, यह बात नहीं बैठती। समझ में आया?

सर्वज्ञ परमात्मा हैं.. ओहो! त्रिलोकनाथ एक समय में तीन काल-तीन लोक को देखते हैं। आया न? कर्मों को छेदकर.. आहाहा! एक समय में भूत, भावी और वर्तमान। आहाहा! इन तीनों काल के कर्मों को छेदकर। ऐसी उसमें ताकत है। ऐसा वह है। ताकत का अर्थ (यह कि) ऐसा ही आत्मा है। आहाहा! आत्मा ऐसा है - ऐसा स्वीकार किये बिना दूसरे प्रकार से पकड़ में आवे, और दूसरे प्रकार से कहे कि सब इकट्ठे हो जाओ। किस प्रकार इकट्ठे हों? आहाहा!

पहले तो जिसका कल्याण करना है, वह चीज़ कौन है? उसमें ताकत कितनी है? शक्तियाँ कितनी हैं? उस तत्त्व के ख्याल बिना तत्त्व-सन्मुख वीर्य काम करेगा नहीं। 'रुचि अनुयायी वीर्य।' यदि वह आत्मा अनन्त गुण, अनन्त शान्ति आदि है, ऐसी यदि रुचि हो तो रुचि अनुयायी वीर्य। रुचि है, वहाँ वीर्य काम करेगा। इसमें कोई पर का करना और पर की सेवा करना... आहाहा! यह तो कुछ आया नहीं। आहाहा! सेवा—स - एव। सेवा यह। स - एव। स-एव = सेवा। तू जैसा है, वैसा मानना, यह सेवा है। शान्तिभाई! मार्ग ऐसा है, भाई! आहाहा! यह कोई पक्ष नहीं, यह तो वस्तु का स्वरूप सर्वज्ञ ने देखा, वैसा कहा; तो यह चीज़ जैसी है, वैसी पहले ख्याल में न आवे, उसकी महत्ता, महिमा और उसका महात्म्य ज्ञान में, प्रतीति में, ख्याल में, विश्वास में, रुचि में न आवे, तब तक अन्तर्मुख का पुरुषार्थ होगा नहीं। तब तक पुरुषार्थ बाहर की ओर ढला हुआ रहेगा। आहाहा! मार्ग तो ऐसा है; प्रभु!

मुमुक्षु : पहले तो आगम ज्ञान से प्रतीति हुई।

पूज्य गुरुदेवश्री : पहले ख्याल तो करे कि यह ऐसा आत्मा है। भगवान जैसा

कहते हैं, ऐसा है। जैसा है, वैसा कहा है और जैसा कहा, वैसा मानना। मानने के पश्चात् अन्दर जाकर अनुभव करना। इसके बिना कोई मार्ग है नहीं। कोई मार्ग ही नहीं है कि इसने यह मार्ग किया, इसने यह मार्ग किया, इसने यह मार्ग किया। 'एक होय तीन काल में परमारथ का पंथ।' आहाहा!

देहदेवल में भगवान आत्मा सब भगवान है। भगवान परमेश्वर आत्मा है। उस परमेश्वर की शक्ति और श्रद्धा जब होती है तो परमेश्वर की ओर उसका झुकाव होता है। उसका माहात्म्य न आवे, तब तक परसन्मुख का झुकाव हटता नहीं। आहाहा! आचार्य ने थोड़े शब्दों में गजब काम किया है। 'शुद्धोपयोग अधिकार' है न? पूर्ण पर्याय प्रगट हो, ऐसी तेरी चीज़ है। तेरी चीज ही ऐसी है। वह कोई नवीन चीज़ नहीं है। आहाहा!

कर्म को छेदकर तेरी शक्ति में केवलज्ञान भरा है, तो वह भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों काल का जानना तुझे व्यक्त-प्रगट होगा। आहाहा! तब तेरा धर्म का काम पूरा हुआ। आहाहा! इसमें बाहर का कुछ करने का नहीं आया? आहाहा! परन्तु बाहर में वह है कहाँ? जहाँ है, वहाँ उसका पुरुषार्थ करना चाहिए न? आहाहा! भाषा समझ में आती है न? जिसका कल्याण करना है, जहाँ है, जैसा है; वैसा ख्याल में आये बिना उस ओर ढलता नहीं। आहाहा! समझ में आया? आहाहा!

पहले शब्द में ही इतना भरा है। लो! **जिसने कर्मों को छेद डाला है...** इसमें आत्मा और कर्म की दो अस्ति सिद्ध की। आत्मा है और कर्म भी है; और कर्म पर है, आत्मा स्व है। **ऐसा यह आत्मा भूत, वर्तमान और भावी...** गत काल, वर्तमान और भविष्य। **समस्त विश्व को (अर्थात् तीनों काल की पर्यायों सहित...)** आहाहा! तीनों ही काल की पर्याय द्रव्य में जो है, उस सहित। आहाहा! **समस्त (पर्यायों सहित समस्त पदार्थों को) युगपत् जानता होने पर भी...** समस्त पर्यायों को-ऐसी भाषा ली है। इसका अर्थ यह हुआ कि जो द्रव्य है, उसकी क्रमबद्धपर्याय होगी। भगवान ने ऐसा देखा। जैसा देखा, वैसा होगा। देखा, इसलिए होगा - ऐसा नहीं। देखा, इसलिए होगा - ऐसा नहीं। यह तो देखा। क्या देखा? - कि तीन काल की पर्यायें। कौन सी? जो पर्याय भूतकाल की, वर्तमान और भविष्य की थी, उन पर्यायों को देखा। ऐसे आत्मा के ज्ञान की पर्याय का सामर्थ्य इतना है। आहाहा! उसके सन्मुख तो देखना नहीं, उसकी दरकार नहीं और बाहर की दरकार। मन्दिर बनाओ और यह करो और पैसा खर्च करो, पुस्तकें बनाओ। लो न!

यह आज आया, बड़ा लेख आया है। ओहोहो! सब जितनी पुस्तकें अभी, सबको इकट्ठा करो। आहाहा! पुस्तक में यह चीज़ होवे तो एक है। आहाहा! तो सब एक हो जाए। परन्तु ऐसे एक नहीं होते। सब केवलज्ञान पाकर कर्म को छेदकर अकेला आत्मा एकसाथ नहीं रहता। तू तेरा कर।

तू है या नहीं? आत्मा और कर्म दो है। आत्मा ने अपने सामर्थ्य से कर्म का नाश किया। नाश किया तो तीन काल की पर्याय को देखा। आहाहा! उसमें ऐसा भी आया कि जैसी तीन काल की क्रिया देखी, वैसी वहाँ पर्याय होगी। आहाहा! यह कोई देखी, इसलिए होगी - ऐसा नहीं। वहाँ होगी, ऐसा देखा। तीन काल के जो द्रव्य हैं, उनकी पर्याय तीन काल में जैसी देखी, जब होगी, वहाँ (वैसी) देखी। जैसा देखा, वैसा वहाँ होगा, है? आहाहा! भाई! वीतरागमार्ग बहुत सूक्ष्म। लोगों ने क्रियाकाण्ड में चढ़ा दिया और ऐसी बात को एकान्त कहकर उड़ा दिया है। भाई! मार्ग ऐसा एकान्त है। आहाहा!

आत्मा के अतिरिक्त एक राग का रजकण तेरी चीज़ नहीं है। तुझे किसमें करना है? राग में करना है? रजकण में करना है? आत्मा में करना हो तो आत्मा में राग और रजकण है नहीं। वह तो कर्म को छेदकर केवलज्ञान प्राप्त करे, ऐसी ताकतवाला है। आहाहा! भूत और भावी और तीन काल की पर्यायों सहित समस्त पदार्थों को युगपद जानता होने पर भी... आहाहा! उन सब पर्यायों को, एक समय में पर है और पर को जानने पर भी (राग नहीं होता)। वरना पर को जाने तो राग होता है। स्व के अतिरिक्त पर को जानने में तो राग होता है। केवली को जाने तो भी राग होता है।

यहाँ कहते हैं कि ऐसा **युगपत् जानता होने पर भी मोह के अभाव के कारण...** यह कारण। कारण यह है। आहाहा! मोह के कारण से। पहले कहा न, कर्मों को छेद डाला। यहाँ ही कहा। ऐसा उपदेश है, भाई! मार्ग ऐसा है। आहाहा! भगवान आत्मा इतनी ताकत रखता है कि कर्म का नाश करके केवलज्ञान प्राप्त कर सके, ऐसी उसमें ताकत है। आहाहा! कर्म शब्द से अशुद्ध परिणति। कर्म तो निमित्त से कथन किया। कर्म तो जड़ है। जड़ तो उनके कारण से बँधते हैं, परन्तु उनके बन्ध का कारण जो अशुद्धपरिणति है, उसका एक क्षण में नाश करके तीन काल-तीन लोक को जाने-देखे, ऐसी तेरी शक्ति है। आहाहा!

पर का करना, वह तो तुझमें है नहीं, परन्तु तुझमें सम्यग्दर्शनादि अर्थात् कि ऐसी

वस्तु है – ऐसी प्रतीति और भान हुआ, तब से रागादि का कर्ता भी नहीं। आहाहा! पर का कर्ता तो कभी नहीं, परन्तु आत्मज्ञान-धर्म जहाँ पहली श्रेणी का हुआ, तब से रागादि का कर्ता भी नहीं। क्यों? स्वयं निर्मलानन्द प्रभु, निर्मल का पिण्ड (है), वह मलिन क्षणिक विकार किसलिए करे? विकार करे तो पूरा द्रव्य विकारी हो जाए। ऐसा तो होता नहीं। आहाहा! ऐसा उपदेश है। यह कुछ करना कि यह कर... यह कर... (तो खबर भी पड़े)। परन्तु यह कहा न, यह करना। कर्म को छेदना – यह करना नहीं है? कब छिदते हैं? आत्मा अपने स्वरूपसन्मुख के सामर्थ्य की ओर झुके तो कर्म छिद जाते हैं। तो कर्म का नाश हो जाए तो तीन काल का ज्ञान होता है। तीन काल की पर्याय उसके ज्ञान में ज्ञात हो जाती है।

जगत के पदार्थों की तीन काल की पर्यायें केवलज्ञान में ज्ञात होती हैं। इस हिसाब से भी जहाँ पर्याय होगी, वहाँ होगी। आहाहा! क्रमबद्ध तो है ही। आहाहा! परन्तु ऐसा निर्णय करनेवाला अपने ज्ञायकस्वभाव-सन्मुख जाता है, तब यह क्रमबद्ध और भगवान ने देखा, वैसा होगा – ऐसा निर्णय होता है। आहाहा! ऐसा मार्ग! यह जैनमार्ग ऐसा! दया पालना, व्रत पालना, एक-दूसरे की सेवा करना, एक-दूसरे पर समता रखना। समता तेरे ऊपर रख न! आहाहा! ऐसा मार्ग है, प्रभु! दुनिया को एकान्त लगता है। एकान्त है.. एकान्त है... यह कोई व्यवहार को पालते नहीं। व्यवहार नहीं आया? कर्म को छेद डाला, यह व्यवहार नहीं आया? परद्रव्य का नाश कर डाला। अरे! अशुद्धता का नाश किया, यह भी व्यवहार आया। आहाहा!

कहते हैं कि तीन काल-तीन लोक को जाने, इतनी अधिक जानने की शक्ति खिल गयी **होने पर भी मोह के अभाव के कारण...** मोह के अभाव के कारण, **पररूप से परिणमित नहीं होता...** रागरूप परिणमित नहीं होता। आहाहा! यहाँ तो आत्मा की बात है, भगवान! करना तो यह है। करना इसे है और करना यह है। बाकी इसके अतिरिक्त यह आत्मा दूसरे का कुछ नहीं कर सकता। राग का कर्ता भी नहीं है। यह तो ज्ञायकस्वरूप है। ज्ञायकस्वरूप हुआ। जब त्रिकाल का ज्ञान हुआ तो तीन काल-तीन लोक की पर्याय को देखता है, परन्तु मोह के अभाव के कारण राग नहीं होता। आहाहा! इतना सब... आत्मा सम्बन्धी की बात है।

आत्मा परन्तु आत्मा न होवे तो दूसरी (बात) है कहाँ? आहाहा! आत्मा की बात न होवे तो दूसरी है कहाँ? एक बार कहा था। बहुत वर्ष पहले (संवत्) १९८५ के वर्ष।

एक समय का ज्ञान - यह चीज़ जगत में है, बस। क्योंकि एक समय के ज्ञान में पूरा द्रव्य-गुण और सर्व अनन्त पर्यायें तथा तीन लोक तीन (काल) ज्ञात होते हैं, तो एक ही पर्याय जगत में है, वही वस्तु है। आहाहा! समझ में आया? आहाहा!

'कर्म को छेदकर'- इसमें यह बताया। एक समय की एक पर्याय कर्म का नाश करके, अपनी जो शक्ति थी, वह व्यक्त हुई तो उसकी एक ही पर्याय में पर्याय, पर्याय को जाने; पर्याय, द्रव्य-गुण को जाने; पर्याय दूसरी अनन्त पर्यायों को जाने; पर्याय दूसरे द्रव्य को जाने। आहाहा! तो एक पर्याय से बड़ा रहा कौन अब? उन अनन्त पर्यायों का पिण्ड द्रव्य बड़ा है। परन्तु एक पर्याय... आहाहा! इतनी ताकतवाला तेरा आत्मा है। आहाहा! उससे बड़ा द्रव्य है, बस! यह तो तेरा द्रव्य बड़ा तेरा है। एक पर्याय की इतनी ताकत में पूर्ण आ गया तो तेरे द्रव्य की तो क्या बात करना? प्रभु! आहाहा! लोगों को विश्वास आना कठिन पड़ता है। कुछ करना, उसमें उन्हें ठीक पड़ता है। जो इसमें नहीं है, यह नहीं है, उसे करना, उसमें इसकी नजर पड़ती है और कुछ होता है - ऐसा मानता है। परन्तु जानना-देखना होता है, वह कुछ किया जाता है अन्दर जानना-देखना, उसका इसे विश्वास नहीं आता। आहाहा!

मोह के अभाव के कारण पररूप से परिणमित नहीं होता, इसलिए अब, जिसके समस्त ज्ञेयाकारों को... आहाहा! जिसने समस्त ज्ञेयाकार जितने लोकालोक के हैं **अत्यन्त विकसित ज्ञप्ति के विस्तार द्वारा...** वह सब विकसित पर्याय ख्याल में आ गयी। **ज्ञप्ति के विस्तार द्वारा स्वयं पी गया है...** आहाहा! अपने आत्मा की इतनी सामर्थ्य है कि कर्म का नाश करके एक समय की पर्याय में पूरा लोकालोक—लोक और अलोक, भूत-भविष्य और वर्तमान तीन काल पी गया। आहाहा! पी गया अर्थात् क्या? जानने में आया। आहाहा! एक समय की पर्याय में... आहाहा! शरीरप्रमाण क्षेत्र छोटा, वह पर्याय का क्षेत्र। जाने तीन लोक-तीन काल। आहाहा! ऐसी पर्याय को पी गया है। इसलिए ऐसा कहा कि इतनी पर्याय तो एक समय में सम्पूर्ण ज्ञात हो गयी। कोई बाकी रही नहीं। आहाहा! ऐसा केवलज्ञान और केवलदर्शन युगपद् होता है - ऐसा यहाँ सिद्ध करना है। एक समय में सत् में होता है। एक समय में जाने और दूसरे समय में देखे, प्रभु! ऐसा भेद नहीं होता। आहाहा! ऐसी ताकत, एक समय में जाने, उसी समय में देखे। तीन काल-तीन लोक की पर्याय पी गया अर्थात् जानने-देखने में आ गया। आहाहा! अब ऐसा

उपदेश! कुछ करने का कहे कि दया पालो, भक्ति करो, व्रत करो, छह परबी खाना नहीं, कन्दमूल खाना नहीं, ब्रह्मचर्य पालना। अरे! भगवान! यह सब होता है, परन्तु यह सब नैतिक-नैतिक शुभभाव की क्रिया है। यह कोई (धर्म नहीं है)। आहाहा!

सहज स्वभाव... भगवान सहज स्वभाव। कुछ प्रगट होना और नाश होना - ऐसा जिसमें है नहीं, ऐसा नित्यस्वभाव। वह जब पर्याय में ख्याल में आया... आहाहा! तब लोकालोक ज्ञात हो गया। वह ज्ञायक किसका करे? भगवान दूसरे की दया पालन करे या नहीं? दया पालने का उपदेश दे न, उपदेश? उपदेश दे या नहीं? आहाहा! उपदेश वाणी है। वाणी की पर्याय तो ज्ञान में आ गयी है। आहाहा! तीन काल-तीन लोक ज्ञान में ज्ञात हो गया है। किसका करे? आहाहा!

अरे रे! जैन में जन्मकर जैन परमेश्वर ने आत्मा कहा, उसकी विचारश्रेणी नहीं, विचारधारा में रुकना नहीं और सिरपच्ची में दूसरे सब में रुके। आहाहा! और उसमें माने कि कल्याण होगा। आहाहा! इसीलिए यहाँ का एकान्त कहते हैं न? एकान्त ही है, प्रभु! तू कहता है, वह भले, तू भी वैसा ही है, नाथ! तुझे खबर नहीं। तुझमें भी एक समय में तीन काल-तीन लोक को जानने की शक्ति है और कर्म का नाश करने की एक समय में तुझमें शक्ति है और तू इस तीन काल को जाने, कोई पर्याय ज्ञात हुए बिना न रहे, ऐसा तू है। भगवान! सब आत्मा ऐसे हैं। आहाहा! इतनी तेरी विशालता, इतनी तेरी महत्ता तुझे न जँचे, यह तो कलंक है। आहाहा! इतनी महत्ता और महिमा इसकी है। है, ऐसा अस्तित्व है। आहाहा! ऐसा अस्तित्व जब न जँचे तो तूने क्या किया? आहाहा!

तेरी पूर्ण चीज़ है, उसकी भी प्रतीति नहीं। तेरे घर में पूर्ण भरा हुआ है, उस घर की प्रतीति नहीं और दूसरे की प्रतीति करने जाए। आहाहा! गाथा में आचार्य का कथन बहुत सूक्ष्म। दिगम्बर सन्तों की वाणी... आहाहा! उसमें अमृतचन्द्राचार्यदेव और पद्मप्रभमलधारिदेव, ओहोहो! यह कोई कथा-वार्ता नहीं है, प्रभु! तेरी चीज़ की महिमा है। तुझे जो परसन्मुख की महिमा किसी चीज़ पर आती है, वह सब जाननेयोग्य है, उसकी महिमा क्या करता है? तुझसे (भिन्न) परचीज़ जो है - पैसा, लक्ष्मी, स्त्री, कुटुम्ब, कीर्ति, वह तो जाननेयोग्य है। जाननेयोग्य में मेरा मानता है। आहाहा! यह संसार में भटकने की बड़ी भ्रमणा है। आहाहा! इसमें कोई इन्कार करे, ऐसा नहीं है, वस्तु का स्वरूप ऐसा है। आहाहा!

आठ-आठ वर्ष के बालक अपनी चीज़ को अन्तर में जानते हैं। आहाहा! उग्र की आवश्यकता नहीं। आठ वर्ष का बालक उसकी महिमा में अन्दर उतर जाता है, केवलज्ञान ले लेता है। आहाहा! अरे! प्रभु! इतनी तेरी ताकत और तू हीनरूप से मानकर रुक गया है। प्रभु! कलंक है। आहाहा! तुझे तेरी शक्ति की महिमा की खबर नहीं। तेरी शक्ति की महिमा कितनी है, इसकी खबर नहीं, प्रभु! तुझे शंका है! आहाहा! अभी तो केवलज्ञान में केवलदर्शन में शंका करे। आहाहा! और आगे-पीछे करे। एक समय में जाने और दूसरे समय में देखे। अरे! प्रभु! ऐसा भंग नहीं होता। अखण्डानन्द का नाथ प्रभु—द्रव्य अखण्ड, गुण अखण्ड, पर्याय अनन्त एक समय में अखण्ड जाने। आहाहा! वह पर को जानने पर भी पररूप परिणमता नहीं।

इसलिए अब, जिसके समस्त ज्ञेयाकारों को... समस्त ज्ञेय अर्थात् जानने में जो आवे वह और आकार अर्थात् स्वरूप। **ज्ञेयाकारों को अत्यन्त विकसित ज्ञप्ति के विस्तार द्वारा स्वयं पी गया है...** आहाहा! भगवान हो गया। वह भगवान था। भगवानपना गुप्त करके रखा था। आहाहा! सर्वज्ञपना, सर्वदर्शीपना तो इसका स्वभाव है-शक्ति है-गुण है। गुप्त रखा था, उसे प्रगट किया। आहाहा! उसमें नया ञ्चया किया? नयी चीज़ ञ्चया हुई? आहाहा! है, उसे प्रगट किया है। है तो तीन काल से। जो है, उसे एक समय में प्रगट किया है। तीन काल-तीन लोक को जानता है। आहाहा!

ऐसे तीनों लोक के पदार्थों को... आहाहा! **पृथक् और अपृथक् प्रकाशित करता हुआ...** भिन्न-भिन्न है भी जानता है और एकसाथ है, उन्हें भी जानता है। आहाहा! **पृथक् और अपृथक् प्रकाशित करता हुआ वह ज्ञानमूर्ति मुक्त ही रहता है।** यहाँ तो कहते हैं कि ज्ञान तो पृथक्-अपृथक् सभी चीज़ को जानता है। आहाहा! ऐसी बात। इसमें कोई दृष्टान्त या बाहर की दलील (काम नहीं आती)। यह करना आया, परन्तु अन्दर करना आया। जहाँ तू है... वह। आहाहा!

मुमुक्षु : अपृथक् में अपने द्रव्य-गुण-पर्याय लिये जाते हैं?

पूज्य गुरुदेवश्री : वह सब जानता है। यह तो ज्ञान का स्वभाव बताना है। ऐसा कि पृथक् / भिन्न हो, उन्हें भी जाने और अपृथक् सर्व को जाने। ऐसा नहीं कि अमुक को जाने। सर्व को जाने। आहाहा! ऐसी तेरी चीज़ है। ऐसी तेरी चीज़ क्या, तू ऐसा ही है।

आहाहा! वह यहाँ जरा बीड़ी में-तम्बाकू में, पैसे में और स्त्री में (रुक गया)। आहाहा! अरे प्रभु! तेरी शक्ति तो केवलज्ञान लेने की है न, नाथ! प्रभु! यह तू कहाँ रुका? आहाहा!

प्रभु योगीन्दुदेव कहते हैं, प्रभु! तुझे भव करना कलंक है। आहाहा! तीन लोक का नाथ एक समय में तीन काल-तीन लोक को जाने, ऐसे प्रभु को भव करना, (कलंक है)। आहाहा! ऐसी बात मिलना मुश्किल पड़े। आहाहा! यह करो, यह करो, यह करो... आहाहा! प्रभु! तुझमें अन्दर इतनी शक्ति है न, नाथ! तुझे भगवानरूप से तो बुलाते हैं। आहाहा! समयसार की ७२ गाथा में। ७२ गाथा में, भगवान आत्मा - ऐसा कहते हैं। आहाहा!

शुभ और अशुभभाव, यह अशुचि और मैल है। भगवान! तू तो मैलरहित है न! आहाहा! इस तरह आचार्य ने (आत्मा को) भगवानरूप से बुलाया है। आहाहा! वह भगवान तुझे सुनने में भी प्रतीति न आवे... आहाहा! और अन्तर में रुचि न आवे तो अन्तर में जाने की चारित्रदशा कहाँ से आयेगी? आहाहा! जो चीज़ जानने में नहीं आयी, उस चीज़ में रमना—एकाग्र किस प्रकार होगा? उसे चारित्र नहीं होता। आहाहा! समझ में आया? बात दूसरी।

वे कहते हैं, सब इकट्ठे होओ... इकट्ठे होओ... ओहोहो! नाम लिखे हैं, पूरे हिन्दुस्तान के विद्वानों के नाम और धर्म के नाम। सबके नाम बताकर ऐसा कहते हैं कि सब एक होओ... एक होओ... सब एक हो जाओ। एक कहाँ से हो? प्रभु! एक द्रव्य के एक गुण भी इकट्ठे नहीं होते। एक द्रव्य का एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं होता। आहाहा! एक द्रव्य की एक समय की पर्याय दूसरी पर्याय के साथ एक नहीं होती, प्रभु! आहाहा! प्रभु! तेरी इतनी सामर्थ्य है। यह तो भगवान ने जैसा जाना, वैसा कहा है। भगवान ने कुछ किया नहीं है; जाना है (कि) प्रभु! तेरी एक समय की पर्याय में दूसरी पर्याय का सम्बन्ध नहीं है। आहाहा! ऐसा मैं देखता हूँ। आहाहा! प्रभु! तू भी भगवान जाननहार है, परन्तु अटका है, वह तुझे कलंक है। आहाहा! ऐसा कहकर इसे परमात्मा बनाना है। आहाहा! एक समय में भेद पाड़ना, ऐसा नहीं। एक समय में जाने और देखे, ऐसा तू भगवान है। ऐसा भगवान है ही। है, ऐसा हो जा। आहाहा! आहाहा! यह कहा न? **पृथक् और अपृथक् प्रकाशित करता हुआ वह ज्ञानमूर्ति मुक्त ही रहता है।** पर से मुक्त है। जाने सबको, तो भी पर से मुक्त है।

श्लोक-२७७

तथाहि –

(मंदाक्रांता)

ज्ञानं तावत् सहज-परमात्मान-मेकं विदित्वा,
लोकालोकौ प्रकटयति वा तद्वतं ज्ञेयजालम्।
दृष्टिः साक्षात् स्वपरविषया क्षायिकी नित्यशुद्धा,
ताभ्यां देवः स्व-पर-विषयं बोधति ज्ञेय-राशिम्।।२७७।।

और (इस १६१वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं):—

(वीरछन्द)

एक सहज निज परमात्मा को करे प्रकाशित ज्ञान प्रकाश।
और त्रिलोक अलोक निवासी ज्ञेयों को भी करे प्रकाश॥
नित्य शुद्ध ऐसा क्षायिक दर्शन भी स्व-पर प्रकाशक है।
इनके द्वारा आत्मदेव भी निज-पर ज्ञेय प्रकाशक है॥२७७॥

[श्लोकार्थः—] ज्ञान एक सहजपरमात्मा को जानकर लोकालोक को अर्थात् लोकालोकसम्बन्धी (समस्त) ज्ञेयसमूह को प्रगट करता है (-जानता है)। नित्यशुद्ध ऐसा क्षायिक दर्शन (भी) साक्षात् स्व-परविषयक है (अर्थात् वह भी स्व-पर को साक्षात् प्रकाशित करता है)। उन दोनों (ज्ञान तथा दर्शन) द्वारा आत्मदेव स्व-परसम्बन्धी ज्ञेयराशि को जानता है (अर्थात् आत्मदेव स्व-पर समस्त प्रकाश्य पदार्थों को प्रकाशित करता है)।२७७।

श्लोक -२७७ पर प्रवचन

(२७७ श्लोक) और (इस १६१वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं):—

ज्ञानं तावत् सहज-परमात्मान-मेकं विदित्वा,
लोकालोकौ प्रकटयति वा तद्वतं ज्ञेयजालम्।
दृष्टिः साक्षात् स्वपरविषया क्षायिकी नित्यशुद्धा,
ताभ्यां देवः स्व-पर-विषयं बोधति ज्ञेय-राशिम्।।२७७।।

आहाहा! मक्खन आया, भाई! मक्खन आज तो। **ज्ञान एक सहजपरमात्मा को जानकर...** आहाहा! प्रभु! तेरा ज्ञान तुझे सहज.. आहाहा! **ज्ञान...** अर्थात् आत्मा। **एक सहजपरमात्मा को जानकर...** आहाहा! अपने स्वाभाविक आत्मा को जहाँ पूर्ण जाना, वह **लोकालोक को अर्थात् लोकालोकसम्बन्धी (समस्त) ज्ञेयसमूह को प्रगट करता है...** एक भगवान को जाना और तीन काल-तीन लोक के पदार्थों को जाना। आहाहा! इतनी इसकी महिमा! परमेश्वर है, प्रभु है, परमात्मा है, भगवान है। आहाहा! ऐसा जो हुआ, वह **ज्ञेयसमूह को प्रगट करता है...** तीन काल में जगत में जितने ज्ञेय हैं, उन सर्व को जानता है। सर्व को जानता है, ऐसा ज्ञान का स्वभाव है। वह ज्ञानस्वभाव राग को करे और पर को करे, यह कहाँ से बैठे? प्रभु! यह बात कहाँ से बैठे? कहो, हरिभाई! जो ज्ञान तीन काल-तीन लोक की पर्याय को केवलज्ञान जाने, उस ज्ञान से तुझे काम कराना है, पर का, देश का सुधार करो, सेवा करो।

मुमुक्षु : कब करे?

पूज्य गुरुदेवश्री : आहाहा! पहले रामजीभाई सेवा करते थे। वहाँ डेबरभाई आते थे। इनके घर में पूछने आते थे। एक महीने जेल में जाना पड़ा था। आहाहा! दुनिया की यह... आहाहा!

प्रभु! तू ज्ञानस्वरूप है न! तो तू जाननेवाला है या किसी का करनेवाला है? आहाहा! **ज्ञान एक सहजपरमात्मा को जानकर...** एक आत्मा को यहाँ जाने, वहाँ लोकालोक को जानता है - ऐसा कहते हैं। एक को जाना, एक प्रभु आत्मा पूर्ण है, उसको जाना, उसने लोकालोक को जाना। आहाहा! **एगं जाणहि सव्व जाणहि।** आहाहा! बहुत कठिन काम। फेरफार बहुत हो गया। बड़ा लेख (आया है)। ओहोहो! कितने सबके नाम दिये हैं। तेरापंथी के, स्थानकवासी, श्वेताम्बर, मन्दिरनवासी। सब इतनों-इतनों ने इसमें उनका (अभिप्राय दिया है)। तुम यह करना चाहते हो, इसलिए अच्छा। इकट्ठे करो,

सबको इकट्ठे करो। एकरूप कब हो? प्रभु!

तेरे ज्ञान की पर्याय भिन्न-भिन्न, खण्ड-खण्ड होती है, उसे एकरूप कर। आहाहा! तेरी ज्ञानरूप पर्याय पर को जानने में खण्ड-खण्ड होती है, प्रभु! तुझे नुकसान है, प्रभु! आहाहा! उस खण्ड-खण्ड को रोक, अखण्ड बना। आहाहा! ऐसा सुनने को मिलना मुश्किल पड़ता है। आहाहा! प्रभु का मार्ग तो यह है। अनन्त तीर्थंकर अनन्त केवली, वर्तमान भगवान विराजमान हैं। वे यह बात करते हैं। यह व्यवहार से कहा जाता है। भाषा में आता है न, भाषा में?

ज्ञेयसमूह को प्रगट करता है (-जानता है)। नित्यशुद्ध ऐसा क्षायिक दर्शन... क्षायिक दर्शन लिया। ऐसा कि ज्ञान सर्व को जाने तो दर्शन? **क्षायिक दर्शन (भी) साक्षात् स्व-परविषयक है...** तू कहता है कि स्व को जाननेवाला दर्शन और पर को जाननेवाला ज्ञान। तो यहाँ तो कहते हैं कि दर्शन स्व-पर विषयक दोनों को (देखनेवाला) जाननेवाला है। ज्ञान के साथ दर्शन हुआ। तुझे तेरे में देखना है, पर में देखना नहीं, प्रभु! यह बात करते हैं। आहाहा! तेरे में तुझे देखने से तूने एक को देखा तो सर्व को देखा। और उसके साथ ज्ञान के साथ दर्शन हुआ, वह भी स्व-परप्रकाशक है। नहीं कि दर्शन अकेला स्वप्रकाशक है। आहाहा! सन्तों ने करुणा करके.. आहाहा! यह विकल्प आया और यह लेखन आया। उन्हें कहाँ पड़ी है? उससे कहाँ लाभ मानते हैं कि हमने किया, यह हमें लाभ होगा। अरे! पर को लाभ होगा, यह भी उन्हें कहाँ है? आहाहा! वीतरागमार्ग अलौकिक है, भाई! दुनिया की पूरी पद्धति की अपेक्षा इसकी पद्धति ही अलग है। आहाहा!

यह कहते हैं **साक्षात् स्व-परविषयक है (अर्थात् वह भी स्व-पर को साक्षात् प्रकाशित करता है)।** ज्ञान जैसे स्व-पर को साक्षात् प्रकाशित करता है, वैसे दर्शन भी स्व-पर को प्रकाशित करता है। आहाहा! दर्शन स्व को देखता है और ज्ञान पर को जानता है - ऐसी बात नहीं है। आहाहा! यह तो अन्दर के अन्दर गुणभेद का भी निषेध है। आहाहा! गजब बात! तो तू और वह, दो चीजें एक कहाँ से हुई? गुणभेद का निषेध। दो पर्याय एकसाथ सर्व को देखे। आहाहा! ज्ञान एक समय देखे और दर्शन दूसरे समय में देखे - ऐसा नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु : तब तो आधे काल ज्ञानरहित हो जाए।

पूज्य गुरुदेवश्री : अल्प काल है, यह कहते हैं न। भगवान को आधा काल ज्ञान में और आधा काल दर्शन में रहे। श्वेताम्बर में ऐसा कहते हैं। पहले समय में ज्ञान, दूसरे समय में दर्शन, तीसरे समय में ज्ञान, चौथे समय में दर्शन, ऐसे भगवान को आधा काल ज्ञान और आधा काल दर्शन—श्वेताम्बर ऐसा कहते हैं। पहले समय में ज्ञान, दूसरे समय में दर्शन, तीसरे समय में ज्ञान, चौथे समय में दर्शन—इस प्रकार आधे काल ज्ञान, आधे काल दर्शन। आहाहा! आधा काल ज्ञान और आधा काल दर्शन। आहाहा!

यहाँ तो कहते हैं, एक ही समय में स्व-परप्रकाशक साक्षात् **उन दोनों (ज्ञान तथा दर्शन) द्वारा...** इन दोनों ज्ञान और दर्शन द्वारा **आत्मदेव स्व-परसम्बन्धी ज्ञेयराशि को जानता है...** पहले गुण का कहा कि ज्ञान स्व-पर को जानता है, दर्शन स्व-पर को (देखता) जानता है। अब आत्मा का कहा कि जैसे ज्ञान-दर्शन स्व-पर को जानता है, वैसे आत्मा भी स्व-पर को जानता है। गुण स्व-पर को जानता है तो आत्मा भी स्व-पर को जानता है। पहले प्रश्न आया था न ? - कि दर्शन स्व को देखता है, ज्ञान पर को जानता है। तब ज्ञान अपने को जानता नहीं, अन्धा रहा। ऐसा नहीं है। ज्ञान भी स्व-पर को जानता है, दर्शन भी स्व-पर को जानता (देखता) है, आत्मा भी स्व-पर को जानता है। जैसे गुण स्व-पर को जानता है, वैसे द्रव्य भी स्व-पर को जानता है - ऐसा कहते हैं। देखा!

उन दोनों (ज्ञान तथा दर्शन) द्वारा आत्मदेव स्व-परसम्बन्धी ज्ञेयराशि को जानता है (अर्थात् आत्मदेव स्व-पर समस्त प्रकाश्य पदार्थों को प्रकाशित करता है)। भगवान आत्मा, जिसके गुण ऐसे हैं तो द्रव्य भी ऐसा है कि स्व-पर को जानता-देखता है। यह उसकी शक्ति और स्वभाव है। किसी का करना और किसी को जानना, यह भी अभी व्यवहार है। करने का तो कुछ है नहीं, परन्तु पर को जानता है, ऐसा कहना, वह व्यवहार है। तू तुझे जाने-देखे, ऐसा प्रभु! तेरा स्वभाव है। विशेष कहेंगे.....

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)